मानवी मुल्यों का पैगाम

वर्ष 1 अंक 01 पृष्ठे : 6 मुंबई - गुरूवार - दिनांक 15 जानेवारी 2013 (किंमत 2 रुपये)

एससी. एसटी के आरक्षण को लेकर हो रहा माया-मुलायम का आपसी टकराव काँग्रेस की राजनीति के अनुकूल

आज हजारो वर्षो से प्रचलित उच्च-निचता की सामाजिक व्यवस्था को डावाँडोल करनेवाली 'बहुजन' संकल्पना के देशभर स्थिर होते समय, जिस संकल्पना के कारण हजारों साल गुलामी खाँई में तड़पने वालों को सत्ताधारी बनने का अवसर प्राप्त हुआ, उस संकल्पना का अवलंब और उसे मजबूत करने के बजाय यदि कोई अपने निजी स्वार्थ के लिए उसे तहसनहस करने का प्रयास कर रहा तो ऐसे समय में बहुजन समाज के बुध्दीमान लोगों ने इस तरह के स्वार्थी नेताओं पर अंकुश लगाना चाहिए। जो राजसत्ता सामाजिक परिवर्तन के संघर्ष में बाधा निर्माण करती है, ऐसे राजसत्ता का त्याग करना चाहिए। क्योंकि ऐसी राजसत्ता से बहुजनों के कल्याण के बजाय सामाजिक प्रतिक्रांति का उदय होता है। वैसे भी सामाजिक परिवर्तन के पूर्व यदि राजकीय परिवर्तन लाने के बारे में सोचा जाएगा तो उससे चातुर्वर्ण्य व्यवस्था को ही मजबूती मिलेगी इसमें कोई दौराह नहीं।

मुलायम सिंह यादव एवं बहेन मायावती यह दोनों भी बहुजन से केवल तालोकात रखने वाले ही नहीं, किन्तु बहुजन आंदोलन के माध्यम से वह दोनों जुलाई-अगस्त, 1992 को, भले ही देश के एक ही राज्य के क्यों न हो, लेकिन सत्ताधारी बने थे और उस माध्यम से वहाँ बहुजनों का शासन प्रस्थापित हुआ था। इस कारण कोई भी उन्हें बहुजन राजनीति का अच्छी तरह एहसास था इस बात को नकार नहीं सकता। ऐसे होते हुए भी 'अनु.जाती/जनजाति के पदोन्नती (Promotion) में आरक्षण के मुद्दे पर उन दोनों की एक दूसरे के खिलाफ भूमिका को देखकर आश्चर्य प्रतित नहीं होता। क्योंकि वह दोनों भी शेठजी-भटजीओं के राजनीति के शिकार हुए है इसका ही यह एक परिणाम है। उनसे इस आपसी टकराव के पीछे कई कारण हो सकते है। उसमें उनका नीजि स्वार्थ, राजनीति की उनकी पिछली गलतियाँ, या फिर उनकी जल्दी सत्ता पाने की लालसा ऐसे कई कारण हो सकते है। किन्तु इससे काँग्रेस का 'बहुजन विघटन' का दुष्ट हेतु छिप नहीं सकता। मुलायम-मायावती इस जोडी ने सत्ता की मिठास को चखने के कारण कहो या अन्य कारणों की वजह से कहो, काँग्रेस की (शेठजी-भटजीओं की) राजनीति के षडयंत्र उनकी समझ में नहीं आ रहा होगा। शेठजी-भटजीओं के षडयंत्र का स्वरुप अप्रत्यक्ष तरीके से और उच्च स्तर से किया जाता है, जिसके कारण सामान्य लोगों की समझ में आ ही नहीं सकता। जैसा कि उन्होंने 6 दिसंबर, 1992को बाबरी मस्जिद को तहसनहस किया। उपर उपर से उनका यह कृत्य केवल मुसलमानों के खिलाफ प्रतित होता है, किन्तु उस घटना के पीछे उनका सही मकसद देश में दहशत एवं अस्थिरता निर्माण करना था। क्योंकि उन्होंने बाबरी मस्जिद का पतन करके क्या हासिल किया? 'मंदीर वहीं बनाएंगे' ऐसा नारा लगाने वालों की केंद्र में सरकार गठीत होने के बाद भी बाबरी मस्जिद की जगह पर मंदीर का निर्माण क्यों नहीं किया? क्योंकि मस्जिद गिराने के पीछे उनका उद्देश ही वह नहीं था। अपने राजनैतिक एवं प्रशासकीय अधिकारियों के प्रति जागृत हो रहे ओबीसी वर्ग को अयोध्या राममंदीर निर्माण हेतु निकाली 'रथयात्रा' की ओर आकर्षित करने में उन्हें थोड़ी बहुत सफलता हासिल हुई। यहीं पर वह लोग (शेठजी-भटजी) नहीं रुके, बल्कि देश के राजधानी वाले शहरों में बम विस्फोट करवायें। उनमें सेना के ले. कर्नल जैसे उच्च पदस्थ व्यक्ति और केशरी (गेहुआएँ) वस्त्र परिधान करके धार्मिकता का अट्टाहास करनेवाली साध्वी का समावेश था। उनका यह दूहकर्म आम जनता की सोच के परे था, जिसके कारण काफी समय तक वह किसी की समझ में नहीं आया।

और इस बात का फायदा उठाते हुए बम विस्फोटों के आरोप को अपनी शासन व्यवस्था के माध्यम से उन्होंने मुसलमानों पर थोपा और उन्हींके इस काले कारनामों के लिए निष्पाप मुसलमानों को आतंकवादी बनाने में उन्हें सफलता हासिल हुई। किन्तु 'संशोधन एवं विश्लेषण शाखा'(RAW), देश की इस अति उच्च संस्था में कार्य किए हुए पुलिस अधिकारी शहिद हेमंत करकरे उस समय के एटीएस प्रमुख, इनकी नजर से पुरोहित जैसे सेना के उच्च पदस्थ और धार्मिकता का बुरखा ओढी साध्वी प्रज्ञा सिंग जैसे पाखंडी लोग छूट न सकें। शहिद हेमंत करकरे इन्होंने किसी के दबाव में आये बिना मालेगांव बम विस्फोट के आरोप तहत उन्हें हथकडीयाँ पहनाकर अपने साहसी व्यक्तिमत्व का और जाति-धर्म निरपेक्षता का अद्वितीय ऐसा आदर्श हमारे सामने रखा। ऐसे बहादुर लोग ही अपने समाज की गरिमा, अपने देश की प्रतिष्ठा उच्च शिखर तक पहुँचाने में सहायता करते है। किन्तु ऐसे लोगों को अपनी इस सत्यनिष्ठता के लिए अपने प्राणों का मूल्य चुकाना पड़ता है। वैसे भी केवल अपने परिवार के लिए जीने वाले लोग, अपने स्वार्थ के लिए सत्य को बली चढ़ाकर पशुसमान जीवन जीने में ही धन्यता महसूस करते है।

माया-मुलायम इनकी परस्पर विरोधी किन्तु काँग्रेस के अनुकूल ऐसी भूमिका

बहुजन समाज पार्टी की स्थापना अनु.जाति/जमाति/ओबीसी और धार्मिक अल्पसंख्यांक समाज का समावेश वाली सामाजिक संस्था के पार्श्वभूमी के वातावरण में हुआ। उस संस्था का उद्देश्य 'देश की उच-निचता की विषम सामाजिक व्यवस्था को नष्ट करके समाताधिष्ठीत समाजव्यवस्था निर्माण करना' यह था। इस बात से बहुजन समाज पार्टी इस राजकीय पार्टी का उद्देश्य भले ही सत्ता प्राप्त करना हो, फिर भी उस सत्ता का इस्तेमाल अपने मूल संस्था के उद्देश्य की पूर्ति के लिए ही होना चाहिए। अर्थात यहाँ की सामाजिक उच-निचता की व्यवस्था नष्ट करना यही उस पार्टी का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए, ऐसी अपेक्षा रखना गलत नहीं होगा। डॉ. अम्बेडकर कहते है कि, 'राजकीय क्रांती हमेशा सामाजिक क्रांती के पश्चात घटीत होती है। (Political Resolution always follows Social Revolution) डॉ. अम्बेडकर इनके इस कथन तहत सामाजिक क्रांती को सबसे महत्वपूर्ण माना जाना चार्ह्हिए। महापुरुषों की भाषा में जब तक शुद्र-अतिशुद्र या ब्राम्हणेत्तर या अनु.जाति/जनजाति/ओबीसी/मराठा और धार्मिक अल्पसंख्यांक (बहुजन) संगठीत नहीं होंगे, तब तक उच-निचता की सामाजिक व्यवस्था नष्ट नहीं हो सकती। तात्पर्य यह है कि, सामाजिक क्रांती के लिए 'बहुजनों की एकता' यह एक शर्त है। तो फिर मायावती ने केवल अनु.जाति/जनजातिओं के ही पदोन्नती में आरक्षण का पक्ष क्यों लेना? उसी तरह जब मुलायम सिंग, डॉ. राम मनोहर लोहियां, जो समता के लिए आरक्षण के प्रणेता थे, समता के अनुयायी माने जाते है, इन लोगों की अनु.जाति/जनजाति के आरक्षण को विरोध जताना इस बात आश्चर्य महसूस होता है। माया-मुलायम इन दोनों की भूमिका एकदम संदेहजनक प्रतित होती है। क्योंकि उनकी भूमिका परस्पर विरोधी भले ही हो किन्तु काँग्रेस के लिए अनुकूल है। क्योंकि अनु.जाति/जनजाति और ओबीसी को एक दूसरे से दूर रखना यही काँग्रेस की नीति है। मायावती और मुलायम सिंग यह दोनों भी काँग्रेस के इस षडयंत्र के शिकार हुए दिखाई पड़ते है। उन्हें उनके सामने केवल राजसत्ता दिखाई पड़ रही है और सामाजिक परिवर्तन को वे भूल चुके है ऐसा अनुमान करना गलत न होगा। इसके विपरीत उनके विरोधी उनको एक अकेले को सत्ता सौंपकर एक दूसरे से दूर रखना चाहते है, जिससे कि अनु.जाति/जनजाति और ओबीसी नजदीक न आ सके। किन्तु मूर्गे को ढँककर रखने से संवेरा होना टल नहीं सकता। देश में बहुजन समाज जागृती आंदोलन बड़े पैमाने पर चल रहा है और उसीके परिणाम स्वरुप राजकीय लाभ बहुजनों को मिलेगा ही। इसमें बाधा लाने के लिए काँग्रेस सत्ता को आगे करके कभी बहेन मायावती तो कभी मुलायम सिंग को गद्दी पर चढ़ा रहे है। एक बात निश्चित है कि, अब बहेन मायावती और मुलायम सिंग यह दोनों भी उनके प्रतिद्वंदीयों के हाथ की कठपुतली बन गये है। इसीलिए 2007 को इनको विधानसभा में बहुमत मिलकर वह मुख्यमंत्री बने, तो 2012 में मुलायम सिंग इनको बहुमत मिला और उनके पूत्र अखिलेश यादव इनको मुख्यमंत्री पद मिला। देश में चल रही सामाजिक क्रांती को दबाने के लिए काँग्रेस जान बूझकर उत्तर प्रदेश में कभी बहेन मायावती तो कभी मुलायम सिंग इनको सत्ता में बिठा रहे है। जिससे की सामाजिक क्रांती कुछ समय के लिए आगे ढकेली जाये और उससे निर्माण होनेवाली स्थायी (Permanent) राजसत्ता से बहुजनों को वंचित रखा जाएं। सत्ता की नशा एक बार सीर में घूसने के बाद सत्ता पाने के लिए वह आदमी कोई भी चीज करते समय आगे-पीछे नहीं सोचता। ब.स.पा और स.पा. इन दोनों पार्टीयों के अध्यक्ष क्रमनुसार बहेन मायावती और मुलायम सिंग भले ही हो, पर दोनों पार्टीयों में शेठजी-भटजी घूसने के कारण और दोनों पार्टीयों के नेताओं के खिलाफ मुकदमें दाखिल होने के कारण कोर्ट और सीबीआय का उन पर अंकुश है। जिसके कारण काँग्रेस इन दोनों नेताओं को अपने ताल पर नचा रहीं है ऐसा कहना गैर (गलत) नहीं होग। अन्यथा बहुजनों की नेता बहेन मायावती इन्होंने उत्तर प्रदेश में अपने शासनकाल के दौरान आखरी समय में अनु.जाति/जमाति को पदोन्नती में आरक्षण का आदेश निकालकर दूजे

भाव का बीज नहीं बोया होता। और संसद में काँग्रेस के साथ

आरक्षण विधेयक का आग्रह न किया होता। वैसे भले ही कोर्ट द्वारा काँग्रेस ने मुलायम सिंग इन पर परिवार का (सांसद डिंपल यादव को छोड़कर) ज्ञात संपत्ति के विश्लेषण संदर्भ में सीबीआय पूछताछ का आदेश निकाला हो, इसके बावजूद संसद में मुलायम सिंग इनकी पदोन्नती में आरक्षण के विरोधी भूमिका की ओर ध्यान में देते हुए काँग्रेस द्वारा उनके खिलाफ सीबीआय पूछताछ यह एक नाटक लगता है। क्योंकि बहेन मायावती और मुलायम सिंग इन दोनों के की एक दूसरे के खिलाफ भूमिका काँग्रेस को अपेक्षित है। क्योंकि उनकी

उपरोक्त भूमिका के कारण बहुजन संगठीकरण को केवल बाधा ही नहीं पहुँचती अपितू हअनु.जाति/जनजाति और ओबीसी इनमें एक दूसरे के प्रति, द्वेष भावना पैदा होने में मदद हो सकती है। जिससे एक ओर काँग्रेस-बहेन मायावती और दूसरी ओर काँग्रेस-मुलायम सिंग इनका गठबंधन मिलीभगत, फिर चाहे वह सत्ता के लिए ही क्यों न हो, दिखाई पड़ता है।

अनु.जाति/जनजाति/ओबीसी/मराठा एवं धार्मिक अल्पसंख्यांक इन्होंने एक बात समझना जरुरी है कि, आरक्षण का उद्देश्य उन्नत और पिछड़े समाज के स्पर्धा के लिए उन दोनों को जीवन की एक रेखा पर (Equal Level) लाकर आगे जीवन की स्पर्धा शुरु करने के लिए हुआ। वह किसी एक के रोजी रोटी का सवाल नही। इसलिए आरक्षण एक निश्‍चित समय में पूर्ण होना आवश्यक था। वैसा न होना मतलब वह निरर्थक साबित होना ही है। आरक्षण को अंमल में लाना इसका अधिकार जिस काँग्रेस के पास था, उस काँग्रेस की ही आरक्षण लागू करने की इच्छा न थी। इसी कारण देश को आजादी मिलने के 65 साल के पश्चात भी आरक्षण की योजना खत्म नहीं हुई। इसके कारण जो समाज उन्नत था वह और उन्नत होता चला गया और जिस समाज को उस उन्नत समाज के साथ जाना था, वो समाज और पीछे चला गया। इसलिए जब तक आरक्षण का अंमल करने के अधिकार जिस काँग्रेस एवं उसके विस्तृत भाजप जैसे पार्टीयों के हाथ में है, तब तक किसी भी आरक्षण का समाज को लाभ नहीं मिल पायेगा। जैसे कि बस में महिलाओं के लिए आरक्षित सीट तो उनके लिए उपलब्ध होते ही है, इसके अलावा अन्य सभी सीटों पर महिलायें बैठ गई तो भी उन्हें कोई उस सीट से उठाता नहीं या उन्हें उठाने का प्रयास भी नहीं करते। क्योंकि महिलाएँ पुरुषों की अपेक्षा कमजोर (Weak) होती है ऐसा हम मानते है। जिसके कारण बस में संपूर्ण सीटों पर उन्होंने कब्जा किया तो भी पुरुषों के मन में उनके प्रति द्वेष निर्माण नहीं होता। इस प्रकार का चित्र जब तक आरक्षण के संदर्भ में निर्माण नहीं होता, तब तक आरक्षणप्राप्त समाज को आरक्षण का लाभ नहीं मिल सकता। इसलिए जो उन्नत समाज है उसे आगे जाने से रोका जाना चाहिए, ताकि पिछडे समाज को आगे जाने के सभी रास्ते खुले करके देने पडेंगे। आरक्षणप्राप्त समाज को मुख्य प्रवाह में लाना नहीं, बल्कि संपूर्ण समाज को एक स्तर पर लाना है। जिससे की उनके बीच की स्पर्धा योग्य एवं न्यायपूर्ण होगी। यह कार्य काँग्रेस या उसकी विस्तारीत पार्टीयां नहीं कर सकती।

मुलायम सिंग और बहेन मायावती ने बिना किसी बात से घबराते एवं सत्ता के प्रलोभन का शिकार न होते हुए दोनों ने एक साथ आकर बहुजनों का नेतृत्व करना चाहिए। चातुर्वर्ण्य व्यवस्था में सत्ता हस्तगत करना मतलब प्रतिक्रांती को जन्म देना है। इसलिए उन्होंने एक दूसरे के द्वेष को बाजू में रखकर समाज के कल्याण के बारे में सोचना चाहिए और उनका व्यक्तिगत (नीजि) द्वेष सामाजिक द्वेष न बने इस बात की सावधानी उन्होंने बरतनी चाहिए। जैसे डॉ. अम्बेडकर से बुध्द, कबीर एवं म.फुले इनको अपना गुरु मानकर बहुजन समाज का एक वैचारिक नाती (रिश्ता) प्रस्थापित किया है। उस वैचारिक रिश्ते का आदर्श बहुजन समाज द्वारा लिया जाना चाहिए। जाति, समाज या खून इनके आधार पर बहुजन समाज की रिश्तेदारी तय नहीं होती यह उपर लिखी बात से स्पष्ट होता है। इनके बीच वैचारिक रिश्तेदारी (नाता) प्रस्थापित होना चाहिए और इससे ही उनका उत्कर्ष हो सकता है। उच-निचता की सामाजिक व्यवस्था वैसी की वैसी रखकर सही तौर पर कायम राजनैतिक सत्ता हासिल नहीं हो सकती। आज एक पार्टी की ओर से दूसरे पार्टी को सत्ता का हस्तांतरण चल रहा है। वह एक भूलभूलैया होकर सत्ता का उपभोग करनेवाली सभी पार्टीयां काँग्रेस का ही (शेठजी-भटजीओं का) विस्तार है। इसलिए बहुजनों को यदि हमेशा के लिए राजसत्ता हस्तगत करनी है तो उन्होंने पहले सामाजिक कार्य पर जोर लगाना चाहिए। पहला काम पहले (First Thing First) ! इमारत की नींव का कर्म पूरा किए बगैर उस पर ताज नहीं चढ़ाया जा सकता। अंततः डॉ. अम्बेडकरजी ने लखनऊ की सभा में किए भाषण को बहुजनों ने ध्यान में रखा तो संगठीकरन में कितनी ताकत होती है, यह बात उनके ध्यान में आने को ज्यादा समय नहीं लगेगा। अनु.जाति और पिछड़ा वर्ग अगर इकठ्ठा होता है, तो गोविंद वल्लभ पंत जैसे ब्राम्हणवर्गीय लोग मेरे जूते की तसमें खोलने में एक महसूस करेंगे। गोविंद वल्लभ पंत उस समय उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री होने के नाते मंच पर उपस्थित थे। इसलिए बहुजनों ने अपने अंदर 'गतिशिलता' लाना महत्वपूर्ण है।

‘बहुजन संगठीकरण के काम की प्रक्रिया से एक भी हिस्सा छोड़ दिया अथवा उसमें एक भी नया जोड़ा, तो सामाजिक क्रांती घटीत नहीं हो सकती।’

किसी भी कार्य की शुरुवात उस कार्य का जो आधार होता है, उससे ही की जाती चाहिए। जैसे किसी इमारत को बनाना हो उसके निर्माण की शुरुवात उसके नींव (Basement) से की जाती है। जमीन में फसल बोनी हो तो पहले जमीन को तैयार करना पड़ता है, जैसे हल चलाना, घास-फूंस, पत्थर निकालकर फिर आगे के काम किये जाते है। गणित सुलझने के लिए गणित के सूत्र का ज्ञान होना आवश्यक है। परन्तु यह सब बातें करने के लिए उस दिशा में विचार करना महत्वपूर्ण है। अर्थात कोई भी कार्य करने से पूर्व उस संदर्भ में विचार करना महत्वपूर्ण होता है। परन्तु विचार करते समय उसके साथ कुछ अच्छाईपूर्ण बातें न हो तो वह विचारपूर्वक की हुई बातें भी मनुष्य के लिए घातक साबीत हो सकती है। जैसे भट-ब्राम्हणों ने अपने स्वार्थ के लिए समाज के अन्य लोगों को धोखा देने के लिए विचारपूर्वक कुछ बातें की है। जैसे कि देवी-देवताओं का निर्माण करके पुरोहितगिरी अपनी ओर रखकर समाज में विना साहस पैसा और प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली। धर्म और जाति का निर्माण करके खुद संगठीत होकर बाकी समाज को हजारों जातियों में बाँट दिया। और उससे अलग अलग धर्म निर्माण के लिए जिम्मेदार बने। परन्तु विचारों के साथ यदि कुछ मानवी कल्याण के मुल्य हो तो उस विचार से सबका भला हो सकता है। जैसे संत-महापुरुषों ने लोगों को जो विचार दिये उसे प्रेम और करुणा की जोड़ दी जिसके कारण उनके कार्य से प्रेम और करुणापूर्ण समाज का निर्माण हो सका।

आज भट-ब्राम्हण समाज एक नींदा का विषय बन गया है। क्योंकि उन्होंने अपनी जाति को संगठीत तो किया, लेकिन अपने स्वार्थ हेतु अन्य समाज को बिखेर दिया और उनको काल्पनिक जातियों के नाम दे डाले। उनको दुर्बल बनाने के लिए अनेक नियम-नियमावली बनाई। इतना ही नही तो उन नियमों का पालन करना अनिवार्य कर दिया। लोगों ने उनका पालन करने से पहल उन नियमों पर विचार न करने के कारण उनका घात हुआ। भट-ब्राम्हणों ने कोई भी काम एवं व्यवसाय न करते हुए धन का भांडार और प्रतिष्ठा का हक प्राप्त कर लिया। वे यह केवल विचार एवं लेखन के कारण कर सके। लेकिन आज हम देखते है कि, ब्राम्हणेत्तर समाज के बड़े बड़े विद्वान पंडीत केवल अपने बारे में ही सोचकर कही तो भी नौकरी स्वीकार करके अपने रोजी रोटी में ही उलझे हुये है। उनका पांडित्य, विद्वत्ता उनके रोजी रोटी के सीमित विचार के कारण सड़ गई है। उनको यदि किसी ने सवाल किया तो उनका कहना है कि, यदि नौकरी-धंदा न करें तो क्या भुखें रहे? लेकिन उनको इस बात का विस्मरण होता है कि, भट-ब्राम्हण लोग कुछ कामधंदा न करते हुए उनके पास धन का भांडार कैसे? उन्हें समाज में प्रतिष्ठा कैसे? इस बात पर और उनका प्रतिप्रश्न हो सकता है कि, फिर क्या भट-ब्राम्हणों का अनुकरण करके फुकट खाने की प्रवृत्ति अपनायें और अन्य लोगों को मूर्ख बनाकर खुद ब्राम्हणों जैसा प्रतिष्ठावान बने? इसका जवाब ऐसा दे सकते है कि, ‘संपदा श्रम से पैदा होती है और श्रम विचारों से निर्माण किये जाते है।’

मानव कल्याण का विचार सदैव एक-एक अकेले इन्सान ने खोज निकाला है तथा उसे मूर्त स्वरुप दिया है, अर्थात उस विचार को अस्तित्व प्राप्त करके दिया है। परन्तु जैसे जैसे परिस्थिती में बदलाव होता है, उसके अनुसार उस विचार में परिवर्तन करना पड़ता है। मानव कल्याण का विचार यदि सही मायने में अर्थात शुध्द स्वरुप में समज नहीं पाया तो बदलती स्थिति में किस मार्ग से लागू किया जाए या अंमल में लाया जाए इसकी समज न लगने के कारण उसका लाभ होने की बजाए नुकसान होता है, जिसके कारण फिर आंदोलन में रुकावट आकर बड़ा अंतर निर्माण होता है। जिस प्रकार बुध्द के पश्चात उनके अनुयायियों को उनका विचार शुध्द स्वरुप से न समझने के कारण या महात्मा फुले के पश्चात उनके अनुयायियों को उनका विचार शुध्द रुप से न समझने के कारण उन्हें जो मकाम हासिल करना था, जो लक्ष पाना था वह न पा सके। ऐसी परिस्थिती पर जीत हासिल करने के लिए सामुहिक नेतृत्व की संकल्पना सामने आई है। कोई एक इन्सान हमेशा ही योग्यच प्रकार से विचार और मार्ग दिखा सकता नही इस स्थिति को ध्यान में रखकर वह निश्चित करने के लिए सामुहिक चर्चा करके उससे निर्माण होने वाले लाभ-हानी इनका सही-गलत विचार करके उस पर निर्णय लेना इस प्रक्रिया को सामुहिक नेतृत्व संकल्पना कहा जाता है।

भट-ब्राम्हणों ने ठंडे दिमाग से एवं विचारपूर्वक खुद को संगठीत करके बाकी सभी को बाँटकर उन्हें शिक्षा का अवसर न मिले इसकी सावधानता बरती। जिस कारण ब्राम्हणेत्तर बहुसंख्य होकर भी उनको शिक्षा न मिलने के कारण उनकी विचार करने की प्रक्रिया रुक गई। परन्तु म. फुले इनको परिस्थिति का ज्ञान हो जाने के कारण उन्हें बहुजनों की समस्या की पहचान हुई। बहुजनों की इस स्थिति को बहुजनों का ‘अज्ञान’ जिम्मेदार है इस बात को उन्होंने खोज निकाला। ‘बहुजन’ इस शब्द को उनकी भाषा में ‘शुद्र-अतिशुद्र’ कहा जाता है। ‘वैचारिक परिवर्तन’ यह यह एक खोज और संशोधन पर चलनेवाला सामाजिक आंदोलन होने के कारण जिस किसी समय आंदोलन में खोज का अभाव पैदा हुआ उस समय आंदोलन आगे न बढ़ सका यह एक इतिहास है। इसीलिए वैचारिक परिवर्तन का आंदोलन या सामाजिक क्रांती का आंदोलन यह दोनों बातें एक ही होने के कारण यह शुरु करने के लिए उसमें नई खोज की आवश्यकता होती है। संशोधन/खोज (Research) न करते हुए यदि आंदोलन चलाने का प्रयास किया तो आंदोलन का लाभ होने की बजाय बड़ा नुकसान होता है। यह अनेक बातों से सिध्द हुआ है।

भारत में जो शेठजी-भटजी अल्पसंख्य (Minority) थे, उन्होंने हिंदू धर्म की आड से अन्य समाज को बेवकूफ बनाकर वे अपने साथ होने का दिखावा करके उनके साथ कभी समतापूर्ण बर्ताव नही किया। शेठजी-भटजी और बहुजनों का रिश्ता यह मालिक और गुलाम का ही था। परन्तु हिंदू इस कवच की आड में उनमें एक झूठा एवं भावनिक अहंकार पैदा किया। इस कारण हम शेठजी-भटजीओं के गुलाम होकर भी बहुजनों को इस बात का जल्द अहसास न हो सका। हिंदू धर्म के कवचतले हजारों जातियों को अभय प्राप्त हुआ। वास्तव में देखा जाए तो धर्म तथा जाति यह दोनों बातें एक साथ नहीं रह सकती। जैसे कि कुछ लोग बौध्द समाज पर अन्याय करने के लिए जानबूझकर उन्हें उनका धर्म-बौध्द तथा जात-महार ऐसा लिखने को मजबूर किया जाता है। यह बिलकूल असत्य है। परन्तु अपने देश में अस्तित्व होने वाला समाज अज्ञानवश अनेक असत्य बातों को चिपका बैठा है। इस कारण भारतीय समाज की प्रगती न हो सकी। परन्तु सामाजिक परिवर्तन आंदोलन के कारण बहुजनों में जैसे जैसे जागरुकता बढ़ रही है, वैसे वैसे धर्म एवं जाति का वर्चस्व कम हो रहा है और जिस आधार पर जिन हराम के खाने वाले शेठजी-भटजीओं ने समाज पर वर्चस्व स्थापित किया था वह कम हो रहा है। जिसके कारण अपना वर्चस्व बनाए रखने के लिये धार्मिक रुप से अलग होनेवाले मुस्लिम समाज को और ब्राम्हणेत्तर हिंदू समाज को एक दूसरे के खिलाफ खड़ा करके देश में दंगे-फसाद करवाके हिंदू (बहुजन) एवं मुस्लिमों की कत्तल की गयी। और उनमें एक दूसरे के प्रति द्वेष को बढता ही रखा। सच में तो मुसलमान यह बाहरी लोग न होकर यहां के हिंदू धर्म से तंग आकर ज्ञानी लोगों के कहने से उससे वे बाहर आये इतना ही है। जैसे आज के बौध्द समाज ने भी हिंदू धर्म के अन्यायपूर्ण व्यवहार से तंग आकर ज्ञानी इन्सान डॉ. बाबासाहब आंबेडकर इनके कहने पर उससे वे बाहर आये। इसी तरह ख्रिश्चन एवं शिखों के संदर्भ में भी यही हुआ। वैसे हिंदू धर्म से बाहर पडने से पूर्व उन्हें हो रहे तकलीफ पर अलग अलग माध्यम से हल निकालने का प्रयास किया। इसके लिए उन्होंने अमरिका के कोलंबिया युनिवर्सिटी में 'भारत की जाति, उनकी संरचना, वृध्दी और विकास' यह प्रबंध लिखकर शेठजी-भटजी (भट-ब्राम्हण) धर्म की आड लेकर हिंदू धर्म की इतर जाति का किस प्रकार शोषण करते है इसको दुनिया के सामने रखा। उन्होंने 1935 को भट-ब्राम्हणों को चेतावनी दी थी कि यदि उन्होंने अपने वर्तन में सुधार नहीं किया तो वे उनके साथ नहीं रहेंगे। परन्तु 21 साल राह देखकर भी उनके बर्ताव में कोई सुधार नहीं आया। इतना ही नही तो डॉ. बाबसाहेब अम्बेडकर इनके सामाजिक कार्य के कारण कुछ जातियों में हो रही एकता एवं जागरुकता के कारण अंग्रेजों के दफ्तरों में उनके विकास के लिए कुछ अधिकार मिलने के कारण उनकी उन्नती हुई। परन्तु उनकी उन्नती को मार गिराने के लिए शेठजी-भटजीओं ने षडयंत्र करते हुए 'स्वतंत्रता आंदोलन' खडा किया और उनकी हो रही प्रगती को मार गिराया। अर्थात शिक्षा, नौकरी तथा सेना में भर्ती के जरिये शुद्र-अतिशुद्रों को जो सही मायने में स्वतंत्रता मिलनेवाली थी, वह स्वतंत्रता का नाम लेकर मार गिराई।

यदि जब अनुसुचित जाति के लोग डॉ. आंबेडकर का संदेश मानकर शेठजी-भटजीओं के गुलामी से बाहर आए, तब अम्बेडकरजी को अनु. जाति के प्रती प्रेम था एवं अन्य के प्रती नहीं ऐसा नहीं, तो डॉ. अम्बेडकर ने म.ज्योतिराव फुले इनको अपना गुरु माना। जिससे उनका शुद्रातिशुद्रों का संघर्ष उनके ध्यान में आया था। म.फुले इन्होंने शुद्र एवं अतिशुद्रों को संगठीत करने का प्रयास किया। परन्तु अतिशुद्रों ने (अनु.जाति) उस समय उनका साथ नहीं दिया। क्योंकि लोगों क मन पर जाति का भूत इतनी मजबूती से सवार था, जिससे अपना होनेवाला लाभ भी नहीं मिला। उसी प्रकार डॉ. अम्बेडकरजी ने भी अन्य पिछडा वर्ग (ओ.बी.सी.) - अनु. जाति के साथ संगठीत करने का प्रयास किया। किंतु शेठजी-भटजीओं द्वारा निर्मित उच-नीच की सामाजिक व्यवस्था के कारण अनु. जाति तथा अन्य पिछडा वर्ग इनमें एक दूसरे के प्रति इतना जातिद्वेष निर्माण किया कि, अन्य पिछडा वर्ग को डॉ. अम्बेडकर के साथ अपना भला होगा यह दिखते हुए भी अन्य पिछडा वर्ग ने उनका साथ नहीं दिया। आज भी अनु. जाति विरुध्द अन्य पिछडा वर्ग तथा मराठा इनमें द्वेष भावना निर्माण करने के लिए 1969 में काँग्रेस की केंद्रीय सरकार ने अॅट्रॉसिटी अॅक्ट निर्माण किया। उस कानून के माध्यम से अन्य पिछडा वर्ग एवं मराठा इनके विरोध में अलग अलग षडयंत्रों का प्रयोग करके अॅट्रॉसिटी अॅक्ट अंतर्गत जुर्म दर्ज किये जा रहे है तथा आरक्षण के माध्यम से अनु.जाति/जनजाति और अन्य पिछडा वर्ग एवं मराठा इनके बीच निर्माण हो रहे स्नेह और नजदीकीयों को नष्ट करने का कार्य चल रहा है ऐसा कहा जा सकता ह। वही दूसरी तरफ देश में मौजूद संसदीय लोकशाही नष्ट करने का कार्य भी चल रहा है। इन दोनों कार्य का एक दूसरे से गहरा संबंध है यह हम समझ लेना चाहिए।

डॉ. बाबासाहब अम्बेडकरजी ने समाज के जिन हिस्सों के लिए आरक्षण का जो प्रावधान कर रखा है उसका उद्देश्य केवल शिक्षा लेना और नौकरी प्राप्त करना सीमित नहीं था। तो आरक्षण के माध्यम से आरक्षण प्राप्त समाज की नजदीकी बढ़कर उनमें एक दूसरे के प्रति अपनापन एवं प्रेम की भावना बढ़कर उनका एक विचार (Uniformality of Thoughts) बनेगा तथा उसके परिणाम (Byproduct) के रुप में देश का शासन-प्रशासन, जो हजारों सालों से भट-ब्राम्हणों के हाथ में था और वह उनके हाथ में आयेगा। इसीलिए उन्होंने आरक्षण का कार्यकाल केवल 10 साल तक ही रखा था। अन्यथा आरक्षणप्राप्त समाज को आरक्षण के भूलावे का रोग हो जाएगा इसका एहसास उन्हें था। संसदीय लोकशाही आज अच्छे से परिपक्व हो गई है। जिसके कारण शेठजी-भटजीओं के सभी राजकीय दलों ने तय करके भी उन्हें सांसद में लोकपाल विधेयक पास करने में सफलता नहीं मिली। क्योंकि संसद श्रेष्ठ है, लोकपाल (नोकरशाह) श्रेष्ठ नहीं हो सकता। लोकपाल के हाथ में सभी

अधिकार देकर उसे राजसिंहासन प्रदान करने जैसा होगा। इसीलिए 'लोकपाल' नकारा गया और 'लोकपाल' के पुरस्कर्ताओं को अब केंद्र से राज्य में भेजकर उनकी ओर लोकायुक्त की वकालत करने का कार्य सौंपा गया है। यह लोग भले ही काँग्रेस का विरोध जता रहे हो, काँग्रेस के खिलाफ वोट दो ऐसा बोल रहे हो फिर भी उनके कार्य की जड तक जाकर देखा जाए तो यह प्रचार-प्रसार काँग्रेस के ही हित का दिखाई पड़ता है। क्योंकि लोकपाल कहो या लोकायुक्त, लोकशाही। लोकतंत्र देश में ऐसे पदों का कोई स्थान नहीं होता। क्योंकि जनता ने जो लोकप्रतिनिधि चुनकर दिये है उन पर प्रशासकीय लोकपाल या लोकायुक्त इन सरका नियुक्त अधिकारियों के जरिये नियंत्रण रखना यह लोकशाही का गला घोंट देने जैसा होगा। यह दूसरे रुप से राजेशाही है। इसी कारण संविधान में कार्यकारी मंडल, कानून मंडल और न्यायपालिका यह अलग अलग कार्य करने वाली तथा अधिकार होनेवाली यंत्रणा निर्माण की गई। उसमें लोकपाल या लोकायुक्त हस्तक्षेप नहीं कर सकते। केवल भ्रष्टाचार के नाम पर कोई घटनात्मक यंत्रणा की तोडफोड नहीं कर सकता। इस बात का एहसास अब आम जनता को भी हुआ है। 'लोकपाल' की तैयारी वैसे काँग्रेस की ही थी। परंतु जनविक्षोभ अपने खिलाफ न जाए इसलिए अण्णा हजारे इनको लोकपाल की माँग के लिए आगे किया गया। यह नाटक भी काँग्रेस का ही है। लोकपाल और लोकायुक्त की विफलता जनता के ध्यान में आने के कारण अब अण्णा हजारे को तोफ के मुँह खडा करके जो लोकतंत्र के प्रेमी है, जो अण्णा के खिलाफ जायेंगे वे अण्णा के विरोधी अपने आप काँग्रेस की ओर आकर्षित हो जायेंगे यह काँग्रेस की चाल दिखती है। परन्तु अण्णा के पीछे काँग्रेस तथा सब शेठजी-भटजीओं के राजकीय दल एवं संघटनाएँ होने की पोलखोल होने के कारण अण्णा की नौटंकी अब ज्यादा दिन नहीं चलनेवाली।

लोकशाही / लोकतंत्र का अचानक विस्फोट

लोकतंत्र का अचानक विस्फोट होने के लिए मालेगांव बम विस्फोट की बडी मदद हुई। क्योंकि मालेगांव बम विस्फोट में जो साध्वी प्रज्ञासिंग, ले.क. प्रसाद पुरोहित, रिटायर्ड कर्नल रमेश उपाध्याय तथा अन्य को गिरफ्तार किया गया वे सब आरएसएस के कार्यकर्ता होने की बात सामने आई और देश में सभी ओर जो बमविस्फोट किये गये वे सब आरएसएस के ही लोगोंने ही किये ऐसी रिपोर्ट शहिद हेमंत करकरे इन्होंने सरकार को दी। इतना ही नहीं तो आरएसएस पर बंदी लाने की सिफारीश उन्होंने सरकार की ओर की। मतलब आज तक बमविस्फोट के लिए मुस्लिमों को जिम्मेवार ठहराया जा रहा था व साफ झूठ है यह सिध्द हुआ है। आरएसएस के इस कुटील षडयंत्र के कारण उनकी जेड स्वतंत्रता आंदोलन तक पहुँची है और वह आंदोलन भी किस प्रकार बहुजनों के खिलाफ था यह एकदम स्पष्ट रुप से सामने उभरकर आया। उसके बाद 6 दिसंबर 1992 को बाबरी मस्जिद पर किया गया हमला भी वास्तव में शुद्रातिशुद्रों के (बहुजनों के) संगठीकरण पर था। क्योंकि बाबरी का पतन भट-ब्राम्हणों की एक अतिरेकी कार्रवाई थी।

★ सामाजिक परिवर्तन की सुप्त लहर ★

डॉ. आंबेडकर इनके महापरिनिर्वाण के बाद उनके आंदोलन में गॅप पड़ा, आंदोलन कुछ समय तक रुक गया था। परन्तु 6 दिसंबर 1973 से फिर से म.फुले इनके द्वारा दिया गया शुद्रातिशुद्रों को संगठीत करने का संदेश फिर से कार्यान्वित किया गया। वह आज तक कुछ उतार चढाव छोडकर नियमित चल रहा है। उस सामाजिक कार्य के माध्यम से उसकी उपउत्पत्ती (Byproduct) राजकीय सत्ता (Political Power) बाहर आ रही है। परन्तु जिन्होंने सामाजिक आंदोलन शुरु किया है, उनके नियंत्रण में जब तक उस राजकीय सत्ता की प्रस्थापना नहीं होती तब तक सही अर्थ से राजकीय सत्ता कायम (Permanent) तथा बहुजनों के लिए हितकारक साबीत नहीं हो सकती। इस बात का अनुभव 1992 में आया। सामाजिक कार्य की उपउत्पत्ती (Byproduct) के रुप में 1992 में उत्तर प्रदेश में शुद्रअतिशुद्रों की सत्ता आई थी। परन्तु राजकीय सत्ता पर सामाजिक नियंत्रण न होने के कारण व सत्ता जल्द ही गिर गई और इतना ही तो जिनके विरोध में बहुजनों का संघर्ष था, उन शेठजी-भटजीओं ने बहुजनों क दल में प्रवेश करके उसका स्वरुप ही बदल दिया और उस क्रांती के आंदोलन को प्रतिक्रांती में परिवर्तित किया। इसलिए आंदोलन का अंतिम लक्ष और सिध्दांत यह दो बातें महत्वपूर्ण है। जो उचनीच की सामाजिक व्यवस्था है वह नष्ट करके समता पर आधारीत सामाजिक व्यवस्था निर्माण करना और वह आंदोलन चलाने के लिए समता, स्वतंत्रता, भाईचारा और न्याय इन वैचारिक मुल्यों पर अनु.जाति/जनजाति/अन्य पिछडा वर्ग, मराठा एवं धार्मिक अल्पसंख्यांक अर्थात बौध्द, मुस्लिम, शीख, ख्रिश्चन इनको संगठीत करके यह बातें भुलाई नहीं जा सकती। बहुजन संगठीकरण के काम में हमने इसमें से एक भी हिस्सा कम किया या नया जोडा तो सामाजिक क्रांती घटीत नहीं हो सकता और पर्याय स्वरुप उससे निकलनेवाली उपउत्पत्ती (Byproduct) राजकीय सत्ता हासिल नहीं हो सकती। आज क्रांतीसदृश्य सामाजिक स्थिति निर्माण हुई है। मतलब आम के पेड को अब आम लग गये है, किंतु जब तक उसे शाख नहीं लगेगी, तब तक उसे तोड़ा नही जा सकता। बिना शाख लगे आम पक नहीं सकते। वैसेही शाख लगने के बाद भी तोडते समय आम को सुरक्षित रुप से तोडा जाना चाहिए अन्यथा आम खराब होकर अच्छी तरह से नही पक पायेंगे। उसी तरह सामाजिक क्रांतीसदृश्य परिस्थिति निर्माण तो हुई है, परंतु वह घटीत होने के लिए समाज के शुद्रअतिशुद्रों को एक विचार की माला में हलके से डालना चाहिए और फिर उसमें से बाहर उसके परिणाम स्वरुप बाहर निकलनेवाली राजकीय सत्ता (Political Power) सावधानतापूर्वक स्वीकारनी पडेगी।

यह पत्रिका मालिक, प्रकाशक व संपादक भीमराव नारायणराव वाघने ममता एन्टरप्राईजेस, घाटकोपर में मुद्रित करके, सुंदर नगर को-ऑप. हौ. सो., बिल्डिंग नं. 1, रुम नं. 411, सेनापती बापट मार्ग, दादर (प.), मुंबई - 28. से प्रकाशित किया। इस पत्रिका में छपे लेखों से संपादक सहमत होंगे ऐसा नही है। दूरध्वनी - 022-24379729